मित्रता

–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

लेखक–परिचय

शुक्लजी हिन्दी के श्रेष्ठ समालोचक, मौलिक निबंधकार, गंभीर लेखक और कर्मठ साहित्यकार थे। ये हिन्दी के वैज्ञानिक समीक्षा के जनक कहे जाते हैं। इनकी कृतियों में गंभीर चिन्तन और सूक्ष्म–दृष्टि का अद्‌भुत सामंजस्य दीख पड़ता है। शैली में सजीवता एवं रोचकता लाने के लिए हास्य व्यंग्य का समावेश उनकी अपनी विशेषता है। 'चिन्तामणि' में संगृहीत भावों और मनोविकारों पर लिखे गये इनके निबंध हिन्दी–साहित्य में बेजोड़ माने जाते हैं। शुक्लजी की भाषा प्रौढ़–गम्भीर, परिष्कृत और सूत्रात्मक है, जो गम्भीर विवेचना और गवेषणात्मक चिन्तन के लिए सर्वथा उपयुक्त है। शुक्लजी की कृतियों में 'चिन्तामणि', 'रस मीमांसा', त्रिवेणी, हिन्दी–साहित्य का इतिहास, जायसी–ग्रन्थावली की भूमिका उल्लेखनीय है।

पाठ–परिचय

'मित्रता' निबंध में शुक्लजी ने बताया है कि मित्रों का चयन करते समय बहुत सतर्कता रखनी चाहिए। केवल बाह्य रंग रूप से मित्रता स्वयं को धोखा देना है, सामने वाले का अतीत तथा चरित्र देखकर मित्रता हेतु आगे आना चाहिए। विश्वासपात्र मित्र से बड़ी भारी रक्षा रहती है। वह सच्चे पथ–प्रदर्शक के समान होता है और मुसीबत के समय अपने मित्र को आगे बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित करता है। आदर्श मित्र के लक्षणों पर प्रकाश डालते हुए शुक्लजी ने मित्रता की आवश्यकता और मित्र के कर्त्तव्यों का उल्लेख किया है। इसी के साथ शुक्लजी ने इस बात पर भी जोर दिया है कि बुरी संगति पाँव में बँधी चक्की की तरह होती है जो व्यक्ति को वैचारिक भ्रष्टता तथा पतन की ओर धकेलती है।

**** ****

जब कोई युवा पुरुष अपने घर से बाहर निकलकर बाहरी संसार में अपनी स्थिति जमाता है, तब पहली कठिनता उसे मित्र चुनने में पड़ती है। यदि उसकी स्थिति बिल्कुल एकांत और निराली नहीं रहती तो उसकी जान–पहचान के लोग धड़ाधड़ बढ़ते जाते हैं और थोड़े ही दिनों में कुछ लोगों से उसका हेल–मेल हो जाता है। यही हेल–मेल बढ़ते–बढ़ते मित्रता के रूप में परिणत हो जाता है। मित्रों के चुनाव की उपयुक्तता पर उसके जीवन की सफलता निर्भर हो जाती है, क्योंकि संगति का गुप्त प्रभाव हमारे आचरण पर बड़ा भारी पड़ता है। हम लोग ऐसे समय में समाज में प्रवेश करके अपना कार्य आरंभ करते हैं, जब कि हमारा चित्त कोमल और हर तरह का संस्कार ग्रहण करने योग्य रहता है। हमारे भाव

अपरिमार्जित और हमारी प्रवृत्ति अपरिपक्व रहती है। हम लोग कच्ची मिट्टी की मूर्ति के समान रहते हैं, जिसे जो जिस रूप में चाहे, उस रूप में ढाले– चाहे राक्षस बनाए, चाहे देवता। ऐसे लोगों का साथ करना हमारे लिए बुरा है, जो हमसे अधिक दृढ़ संकल्प के हैं, क्योंकि हमें उनकी हर बात बिना विरोध के मान लेनी पड़ती है। पर ऐसे लोगों का साथ करना और भी बुरा है, जो हमारी ही बात को ऊपर रखते हैं, क्योंकि ऐसी दशा में न तो हमारे ऊपर कोई नियंत्रण रहता है और न हमारे लिए कोई सहारा रहता है। दोनों अवस्थाओं में जिस बात का भय रहता है, उसका पता युवकों को प्रायः बहुत कम रहता है। यदि विवेक से काम लिया जाए तो यह भय नहीं रहता, पर युवा पुरुष प्रायः विवेक से कम काम लेते हैं। कैसे आश्चर्य की बात है कि लोग एक घोड़ा लेते हैं तो उसके सौ गुण–दोष को परख कर लेते हैं, पर किसी को मित्र बनाने में उसके पूर्व आचरण और स्वभाव आदि का कुछ भी विचार और अनुसंधान नहीं करते। वे उसमें सब बातें अच्छी–ही–अच्छी मानकर अपना पूरा विश्वास जमा देते हैं। हँसमुख चेहरा, बातचीत का ढंग, थोड़ी चतुराई या साहस– ये ही दो–चार बात किसी में देखकर लोग चटपट उसे अपना बना लेते हैं। हम लोग यह नहीं सोचते कि मैत्री का उद्देश्य क्या है? क्या जीवन के व्यवहार में उसका कुछ मूल्य भी है। यह बात हमें नहीं सूझती कि यह ऐसा साधन है, जिससे आत्मशिक्षा का कार्य बहुत सुगम हो जाता है। एक प्राचीन विद्वान का वचन है, ''विश्वासपात्र मित्र से बड़ी भारी रक्षा रहती है। जिसे ऐसा मित्र मिल जाए उसे समझना चाहिए कि खजाना मिल गया।'' विश्वासपात्र मित्र जीवन की एक औषध है। हमें अपने मित्रों से यह आशा रखनी चाहिए कि वे उत्तम संकल्पों से हमें दृढ़ करेंगे, दोषों और त्रुटियों से हमें बचायेंगे, हमारे सत्य, पवित्रता और मर्यादा के प्रेम को पुष्ट करेंगे, जब हम कुमार्ग पर पैर रखेंगे, तब वे हमें सचेत करेंगे, जब हम हतोत्साहित होंगे, तब हमें उत्साहित करेंगे। सारांश यह है कि हमें उत्तमतापूर्वक जीवन–निर्वाह करने में हर तरह से सहायता देंगे। सच्ची मित्रता में उत्तम वैद्य की–सी निपुणता और परख हेाती है, अच्छी–से–अच्छी माता का–सा धैर्य और कोमलता होती है। ऐसी ही मित्रता करने का प्रयत्न प्रत्येक व्यक्ति को करना चाहिए।

छात्रावस्था में मित्रता की धुन सवार रहती है। मित्रता हृदय से उमड़ी पड़ती है। पीछे के जो स्नेह–बंधन होते हैं, उनमें न तो उतनी उमंग रहती है, न उतनी खिन्नता। बाल–मैत्री में जो मग्न करने वाला आनंद होता है, वह और कहाँ? कैसी मधुरता और कैसी अनुरक्ति होती है, कैसा अपार विश्वास होता है? हृदय से कैसे–कैसे उद्‌गार निकलते हैं? वर्तमान कैसा आनंदमय दिखाई पड़ता है और भविष्य के संबंध में कैसी लुभाने वाली कल्पनाएँ मन में रहती हैं। कितनी जल्दी बातें लगती हैं और कितनी जल्दी मानना होता है।

''सहपाठी की मित्रता'' इस उक्ति में हृदय के कितने भारी उथल–पुथल का भाव भरा हुआ है। किन्तु जिस प्रकार युवा पुरुष की मित्रता स्कूल के बालक की मित्रता से दृढ़, शांत और गंभीर होती है, उसी प्रकार हमारी युवावस्था के मित्र बाल्यावस्था के मित्रों से कई बातों में भिन्न होते हैं। मैं समझता हूँ कि मित्र चाहते हुए बहुत–से लोग मित्र के आदर्श की कल्पना मन में करते होंगे। पर इस कल्पित आदर्श से तो हमारा काम जीवन के झंझटों में चलता नहीं। सुन्दर प्रतिभा, मनभावनी चाल और स्वच्छंद प्रकृति, ये ही दो–चार बातें देखकर मित्रता की जाती है, पर जीवन–संग्राम में साथ देने वाले मित्रों में इनसे कुछ अधिक बातें चाहिए। मित्र केवल उसे नहीं कहते, जिसके गुणों की तो हम प्रशंसा करें, पर जिससे हम स्नेह न कर सकें, जिससे अपने छोटे–छोटे काम ही हम निकालते जाएँ, पर भीतर–ही–भीतर घृणा करते रहें। मित्र सच्चे पथ–प्रदर्शक के समान होना चाहिए, जिस पर हम पूरा विश्वास कर सकें। मित्र भाई के समान होना चाहिए, जिसे हम अपना प्रीति–पात्र बना सकें। हमारे और हमारे मित्र के बीच सच्ची

सहानुभूति होनी चाहिए। ऐसी सहानुभूति जिससे एक के हानि–लाभ को दूसरा अपना हानि–लाभ समझे।

मित्र का कर्त्तव्य इस प्रकार बताया गया है, ''उच्च और महान कार्यों में इस प्रकार सहायता देना, मन बढ़ाना और साहस दिलाना कि तुम अपनी–अपनी सामर्थ्य से बाहर काम कर जाओ।'' यह कर्तव्य उसी से पूरा होगा, जो दृढ़ चित्त और सत्य–संकल्प का हो। इससे हमें ऐसे ही मित्रों की खोज में रहना चाहिए जिनमें हमसे अधिक आत्मबल हो। हमें उनका पल्ला उसी तरह पकड़ना चाहिए, जिस तरह सुग्रीव ने राम का पल्ला पकड़ा था। मित्र हों तो प्रतिष्ठित और शुद्ध हृदय के हों, मृदुल और पुरुषार्थी हों, शिष्ट और सत्यनिष्ठ हों, जिससे हम अपने को उनके भरोसे पर छोड़ सकें और यह विश्वास कर सकें कि उनसे किसी प्रकार का धोखा न होगा।

जो बात ऊपर मित्रों के संबंध में कही गयी है, वही जान–पहचानवालों के संबंध में भी ठीक है। जान–पहचान के लोग ऐसे हों, जिनसे हम कुछ लाभ उठा सकते हों, जो हमारे जीवन को उत्तम और आनंदमय बनाने में कुछ सहायता दे सकते हों, यद्यपि उतनी नहीं जितनी गहरे मित्र दे सकते हैं। मनुष्य का जीवन थोड़ा है, उसमें खाने के लिए समय नहीं। यदि क,ख और ग हमारे लिए कुछ नहीं कर सकते हैं, न कोई बुद्धिमानी या विनोद की बातचीत कर सकते हैं, न कोई अच्छी बात बतला सकते हैं, न सहानुभूति द्वारा हमें ढ़ाढ़स बंधा सकते हैं, न हमारे आनंद में सम्मिलित हो सकते हैं, न हमें कर्त्तव्य का ध्यान दिला सकते हैं, तो ईश्वर हमें उनसे दूर ही रखे।

आजकल जान–पहचान बढ़ाना कोई बड़ी बात नहीं है। कोई भी युवा पुरुष ऐसे अनेक युवा पुरुषों को पा सकता है, जो उसके साथ थियेटर देखने जाएँगे, नाचरंग में जाएँगे, सैर–सपाटे में जाएँगे, भोजन का निमंत्रण स्वीकार करेंगे। यदि ऐसे जान–पहचान के लोगों से कुछ हानि न होगी, तो लाभ भी न होगा। पर यदि हानि होगी तो बड़ी भारी होगी।

कुसंग का ज्वर सबसे भयानक होता है। यह केवल नीति और सद्‌वृत्ति का ही नाश नहीं करता, बल्कि बुद्धि को भी क्षय करता है। किसी युवा पुरुष की संगति यदि बुरी होगी तो वह उसके पैरों में बँधी चक्की के समान होगी, जो उसे दिन–रात अवनति के गड्‌ढे में गिराती जाएगी और यदि अच्छी होगी तो सहारा देने वाली बाहु के समान होगी, जो उसे निरंतर उन्नति की ओर उठाती जाएगी।

इंग्लैण्ड के एक विद्वान को युवावस्था में राज–दरबारियों में जगह नहीं मिली। इस पर जिंदगी भर वह अपने भाग्य को सराहता रहा। बहुत–से लोग तो इसे अपना बड़ा भारी दुर्भाग्य समझते, पर वह अच्छी तरह जानता था कि वहाँ वह बुरे लोगों की संगति में पड़ता जो उसकी आध्यात्मिक उन्नति में बाधक होते। बहुत–से लोग ऐसे होते हैं, जिनके घड़ी भर के साथ से भी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, क्योंकि उनके ही बीच में ऐसी–ऐसी बातें कही जाती हैं जो कानों में न पड़नी चाहिए, चित्त पर ऐसे प्रभाव पड़ते हैं, जिनसे उसकी पवित्रता का नाश होता है। बुराई अटल भाव धारण करके बैठती है। बुरी बातें हमारी धारणा में बहुत दिनों तक टिकती हैं। इस बात को प्रायः सभी लोग जानते हैं कि भद्‌दे व फूहड़ गीत जितनी जल्दी ध्यान पर चढ़ते हैं, उतनी जल्दी कोई गंभीर या अच्छी बात नहीं। एक बार एक मित्र ने मुझसे कहा कि उसने लड़कपन में कहीं से बुरी कहावत सुनी थी, जिसका ध्यान वह लाख चेष्टा करता है कि न आए, पर बार–बार आता है। जिन भावनाओं को हम दूर रखना चाहते हैं, जिन बातों को हम याद करना नहीं चाहते, वे बार–बार हृदय में उठती हैं और बेंधती हैं। अतः तुम पूरी चौकसी रखो, ऐसे लोगों को साथी न बनाओ जो अश्लील, अपवित्र और फूहड़ बातों से तुम्हें हँसाना चाहें। सावधान रहो। ऐसा न हो कि पहले–पहल तुम इसे एक बहुत सामान्य बात समझो और सोचो कि एक बार ऐसा हुआ, फिर ऐसा न होगा, अथवा तुम्हारे चरित्रबल का ऐसा प्रभाव पड़ेगा कि ऐसी बातें बकने वाले आगे चलकर

आप सुधर जाएँगे। नहीं, ऐसा नहीं होगा। जब एक बार मनुष्य अपना पैर कीचड़ में डाल देता है, तब फिर यह नहीं देखता कि वह कहाँ और कैसी जगह पैर रखता है। धीरे–धीरे उन बुरी बातों में अभ्यस्त होते–होते तुम्हारी घृणा कम हो जाएगी। पीछे तुम्हें उनसे चिढ़ न मालूम होगी, क्योंकि तुम यह सोचने लगोगे कि चिढ़ने की बात ही क्या है। तुम्हारा विवेक कुंठित हो जाएगा और तुम्हें भले–बुरे की पहचान न रह जाएगी। अंत में होते–होते तुम भी बुराई के भक्त बन जाओगे। अतः हृदय को उज्ज्वल और निष्कलंक रखने का सबसे अच्छा उपाय यही है कि बुरी संगति की छूत से बचो। एक पुरानी कहावत है–

''काजल की कोठरी में कैसो ही सयानो जाय।
एक लीक काजल की लागि है पै लागि है।

शब्दार्थ–

परिणत– बदला हुआ;
अपरिमार्जित– जो साफ सुथरा न हो, अस्वच्छ;
अपरिपक्व– जो पका न हो, अविकसित;
विवेक– भले बुरे की पहचान करने की शक्ति;
हतोत्साहित–जिसमें उत्साह न रहा हो;
पथ–प्रदर्शक– मार्ग बताने वाला;
पुरूषार्थी– उद्योगशील, परिश्रमी;
लीक– रेखा, निशान;
आध्यात्मिक– आत्मा की उन्नति से सम्बन्धित।
स्वच्छंद प्रकृति– मनमाना काम करने का स्वभाव
उपयुक्तता– अनुकूलता, औचित्य;
संस्कार–परिष्कार, शुद्धि;
नियंत्रण– प्रतिबंध, रोक;
अनुसंधान– खोज;
खिन्नता– उदासीनता;
अनुरक्ति– अनुराग,
सयानो– चतुर, समझदार;
औषध–दवाई,
पल्ला पकड़ना– सहारा लेना,
निष्कलंक– बेदाग, साफ सुथरा

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. जब कोई युवा घर से निकलकर बाहरी संसार में आता है, तो उसे पहली कठिनाई होती है–
   (क) रहने की (ख) भोजन की
   (ग) काम धन्धे की (घ) मित्र चुनने की ( )
2. किसी को मित्र बनाने से पूर्व हमें विचार और अनुसंधान करना चाहिए–
   (क) उसकी बुद्धि का (ख) उसकी दौलत का
   (ग) उसके धैर्य का (घ) उसके आचरण और स्वभाव का ( )
3. मित्रता की धुन सवार रहती है–
   (क) बाल्यावस्था में (ख) युवावस्था में
   (ग) प्रौढ़ावस्था में (घ) छात्रावस्था में ( )
4. कुसंग के ज्वर के कारण क्षय होता है–
   (क) समय का (ख) श्रम का
   (ग) साहस का (घ) नीति सद्वृत्ति एवं बुद्धि का ( )

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. लोगों से हेलमेल का सिलसिला किसमें बदल जाता है?
2. विश्वास पात्र मित्र हमारी सहायता कैसे करेंगे?
3. युवा पुरुष की मित्रता कैसी होती है?
4. किसी युवा पुरुष की बुरी संगति को लेखक ने किसके समान बताया है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. मित्रों के चुनाव की उपयुक्तता का जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है?
2. जो हमारी बात को ऊपर रखते हैं, उनका साथ हमारे लिये ज्यादा बुरा है। कैसे?
3. प्राचीन विद्वान के मित्रता को लेकर क्या विचार है? लिखिए।
4. मित्र का कर्त्तव्य क्या है?

निबंधात्मक प्रश्न–

1. मित्र बनाते समय मैत्री का उद्देश्य क्या होना चाहिए। विस्तार से लिखिए।
2. विश्वास पात्र मित्र को खजाना, औषध और माता के समान क्यों माना है?
3. अच्छे मित्र की क्या–क्या विशेषताएँ बताई गई हैं? पठित पाठ के आधार पर लिखिए।
4. इंग्लैण्ड के विद्वान को राज–दरबारियों में स्थान न मिलने पर उसकी प्रतिक्रिया कैसी रही?
5. इतिहास में वर्णित किसी मित्र का ऐसा प्रसंग लिखिए जो मित्र के जीवन में सकारात्मक सोच या परिवर्तन लाया हो।
6. अगर आप मित्र बनाते हैं तो मित्र में किन बातों का ध्यान रखेंगे तथा आपके मित्र के प्रति क्या–क्या कर्त्तव्य होंगे? अपने विचार लिखिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. दोनों अवस्थाओं ..... अनुसंधान नहीं करते।
2. सहपाठी की मित्रता ..... चलता नहीं।
3. जान–पहचान के ऐसे ..... उनसे दूर ही रखे।
4. जब एक बार ..... छूत से बचो।

*****